▪ Impact Factor – 6.625 ▪ Special Issue - 214 (C)
▪ January 2020 ▪ ISSN – 2348-7143

INTERNATIONAL RESEARCH FELLOWS ASSOCIATION'S
RESEARCH JOURNEY
Multidisciplinary International E-Research Journal
PEER REFREED AND INDEXED JOURNAL

हिंदी साहित्य में चित्रित हाशिए का समाज

- कार्यकारी संपादक -
डॉ. जिजाबराव पाटील

- अतिथि संपादक -
डॉ. बी. एन. पाटील

- मुख्य संपादक -
डॉ. धनराज धनगर

Printed By : PRASHANT PUBLICATIONS, JALGAON

- समकालीन दलित लेखकों के आत्मकथाओं में दलित चेतना ११५
  प्रा. डॉ. कमलकिशोर गुप्ता
- समकालीन हिन्दी साहित्य में चित्रित नारी ११७
  डॉ. अश्विनीकुमार नामदेवराव चिंचोलीकर
- हाशिए का जनजातीय समाज एवं हिंदी कथा साहित्य ११९
  डॉ. शीला आहुजा
- समाजव्यवस्था पर प्रहार करनेवाला 'जूठन' १२२
  प्रा. डॉ. न. पु. काळे
- हिंदी साहित्य और हाशिए का समाज किन्नर विमर्श १२५
  डॉ. विजय कुमार
- हिंदी उपन्यासों में कृषक विमर्श १२७
  प्रा. डॉ. राख बळीराम
- २१ वी सदी के उपन्यासो में किन्नर विमर्श (सन २०१० के बाद) १२९
  डॉ. विजयकुमार टी. कल्लुरकर
- हिन्दी उपन्यासों में चित्रित – किन्नर समाज ('यमदीप' और 'किन्नर कथा' उपन्यासों के संदर्भ में) १३१
  प्रा. महेंद्र गोरजी वसावे
- मजदूर वर्ग की व्यथा : 'गैंगमैन' आत्मकथा १३३
  प्रा. राजेंद्र ज्ञानदेव ननावरे
- यहूदी की लड़की (नाटक) : एक अनुशीलन १३६
  इबरार खान
- परशुराम शुक्ल के काव्य में बाल विमर्श ('मंगल ग्रह जाएँगे' के विशेष संदर्भ में) १३९
  श्री. लिपारे अजित विठ्ठल
- हिन्दी काव्य साहित्य में दलित चेतना : ओमप्रकाश वाल्मीकिजी के 'बस्स! बहुत हो चुका' काव्य संग्रह के परिप्रेक्ष्य में १४१
  प्रा. डॉ. कल्पना सतीष कावळे
- चित्रा मुद्गल के कथा–साहित्य में चित्रित नारी विषयक समस्याएँ १४४
  प्रतिभा चौधरी, डॉ. राजेश भामरे
- हिंदी नाटकों में दलित चेतना १४७
  प्रा. रामहरि काकडे
- ओमप्रकाश वाल्मीकी के कहानी साहित्य में दलित विमर्श १४९
  प्रा. अनिता भिमराव काकडे
- धरती आबा नाटक में 'आदिवासी नायक बिरसा मुंडा के विचार' १५१
  प्रा. संदीप हंसराज शिंदे
- 'जूठन' : भोगे हुए यथार्थ का प्रमाणिक दस्तावेज १५३
  डॉ. ज्ञानेश्वर गणपतराव रानभरे
- आदिवासी जनजातियों की बोली भाषा तथा सामाजिक जीवन का अध्ययन १५६
  (महाराष्ट्र प्रदेश के कोळी मल्हार, कोळी महादेव, कोळी टोकरे के विशेष संदर्भ में)
  डॉ. दिलीप सुखदेव फोलाने
- आदिवासी विमर्श के संदर्भ में आदिवासी कविता १५८
  डॉ. उत्तम राजाराम आळतेकर
- समकालीन आदिवासी जीवन के संघर्ष १६१
  अशोक कुमार सिंह
- आदिवाशी विमर्श में संस्कृति १६४
  ज्ञान प्रकाश
- आदिवासी जीवन की साहित्यिक विरासत १६७
  डॉ. ललित कुमार सिंह

RESEARCH JOURNEY International Multidisciplinary E-Research Journal
Impact Factor (SJIF) - 6.625 | Special Issue 211 (C) : हिंदी साहित्य में चित्रित शोषित का समाज | ISSN : 2348-7143 Jan. 2020

हिंदी नाटकों में दलित चेतना

प्रा. रामहरि काकडे
सहायक प्राध्यापक एवं विभाग अध्यक्ष, हिंदी विभाग
कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, शिवाजी नगर गढ़ी, तहसील – गेवराई, जिला – बीड (४३११४३)

भारत विविधता से भरा देश है । यहां पर विभिन्न जाति, धर्म एवं भाषाओं के लोग रहते हैं । यहां हिंदुओं की संख्या अधिक होकर इसमें ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शुद्र वर्ण मानकर उसके अनुसार श्रम विभाजन किया गया है । जो वर्ण व्यवस्था कर्म पर आधारित थी वही कालांतर में जन्म पर निर्भर हुई । इस वर्ण व्यवस्था में शूद्र को निम्न मानकर उन्हें विभिन्न अधिकारों से वंचित किया । यही स्थिति आधुनिक काल तक चलती रही।

आधुनिक काल में अंग्रेजी शिक्षा एवं शासन व्यवस्था से मनुष्य स्वतंत्रता की महत्ता स्थापित हुई। निम्न समझने वाली जाति में जन्म लेनेवाले डॉ बाबासाहेब अंबेडकर ने ज्योतिबा फुले से प्रेरणा पाकर सदियों से पीड़ित शूद्र समाज में आत्मविश्वास उत्पन्न करने के लिए प्रयास किया। जिस समाज के साथ उच्च वर्गीय हिंदुओं द्वारा अमानवीय व्यवहार किया जा रहा था वही समाज अंग्रेजी शिक्षा एवं डॉ बाबासाहेब आंबेडकर की प्रेरणा से अपने खिलाफ हो रहे अन्याय के विरुद्ध विद्रोह करने लगा। बाबासाहेब ने लोगों को संदेश दिया कि 'शिक्षित बनो, संगठित बनो और संघर्ष करो'। उनके इस उपदेश से प्रेरणा पाकर महाराष्ट्र में एक दलित पीढ़ी ने सामाजिक आंदोलन प्रारंभ किया। इस आंदोलन ने दलितों को अमानवीय घोषित करने वाली हिंदू धर्म की सडी – गली प्रथा एवं परंपराओं को अस्वीकार किया। महाराष्ट्र में दलित पैंथर के आंदोलन से दलित शब्द का अधिक प्रचार प्रसार हुआ। 'दलित' शब्द हिंदी में मराठी से प्रचलित हुआ। दलित साहित्य किसे कहा जाए इस पर दो मत प्रभाव दिखाई देते हैं। पहला एक जो साहित्य दलितों की समस्या पर लिखा जाए भले ही वह उच्च वर्गीय साहित्यकारों के द्वारा ही क्यों ना लिखा गया हो वह साहित्य भी दलित साहित्य कहलाता है। दूसरे विचार के अनुसार जो साहित्य दलितों द्वारा दलितों की समस्या पर लिखा जाता है वही साहित्य दलित साहित्य कहलाता है। प्रसिद्ध दलित साहित्य लेखिका एवं युद्धरत आम आदमी पत्रिका की संपादक रमणिका गुप्ता लिखती है दलित साहित्य कि किसी भी विधा पर चर्चा, शोध – विश्लेषण करते समय हमें इस बात का ध्यान रखना जरूरी है कि इस साहित्य का प्रेरणा स्रोत डॉक्टर बाबासाहेब आंबेडकर और उनकी २२ प्रतिज्ञाएं है। इसलिए चाहे वह कथा साहित्य हो या कविता नाटक या आत्मकथा विधा में रचा गया साहित्य यदि वह दलित साहित्य होने का वादा करता है तो इतना जरूरी होगा कि वह बाबासाहेब के विचारों उनकी प्रतिज्ञाएं के साथ-साथ उनके सूत्र वाक्य 'शिक्षा – संघर्ष – संगठन तथा बुद्ध के अप्प दीपो भव:' की कसौटी पर खरा उतरता है या नहीं।[1] हिंदू धर्म की वर्णाश्रम व्यवस्था एवं जाति प्रथा दलितों की शोषण की मूलाधार रही है। निम्न वर्ग में जन्म लेने के कारण उन पर आजीवन अत्याचार होता रहा है । यह जाति कर्म से न मिलकर जन्म से मिलती है। यह मानवता एवं नैसर्गिक न्याय सिद्धांत के विरुद्ध है। स्वयं डॉ बाबासाहेब आंबेडकर को भी इस समस्या से गुजरना पड़ा। उनका अर्दली तक उन्हें निम्न जाति का मान कर अति अपमानजनक व्यवहार करता था। तो अन्य दलितों की क्या बात है। इस संदर्भ में स्वयं डॉ बाबासाहेब आंबेडकर लिखते हैं अस्पृश्यता का उन्मूलन जाति प्रथा, वर्ण व्यवस्था को नष्ट किए बगैर संभव नहीं है।[2]

हिंदी नाट्य साहित्य में दलित समस्या पर आधारित कई नाटक लिखे गए हैं। जिनमें शेट गोविंद दास का 'दलित कुसुम' लक्ष्मी नारायण लाल का 'एक सत्य हरिश्चंद्र', 'गंगा माटी', जगदीश चंद्र माथुर का 'कोणार्क' डॉ शंकर शेष का 'बाढ़ का पानी','पोस्टर', 'चेहरे', डॉ कुसुम कुमार का 'सुनो शेफाली', 'रावण लीला', 'संस्कार को नमस्कार', डॉ कुमार का 'हवाओं का विद्रोह', डॉ चंद का 'अक्षय वट', ज्ञानदेव अग्निहोत्री का 'माटी जागी रे', 'नेफा की एक श्याम', श्याम मोहन अस्थाना का 'रावण तेरे कितने रूप', स्वदेश दीपक का 'कोर्ट मार्शल', 'जलता हुआ रथ', सर्वेश्वर दयाल सक्सेना का 'बकरी', गोविंद चातक का 'काला मुंह', दूधनाथ सिंह का 'यमगथा', मुद्राराक्षस का 'योअर्स फेथफुली', मृदुला गर्ग का 'जादू का कालीन', नरेंद्र कोहली का 'शंभूक की हत्या', भीष्म साहनी का 'कबीरा खड़ा बाजार में', मन्नू भंडारी का 'महाभोज' आदि नाटक प्रमुख है। दलित साहित्य विद्रोही साहित्य है।दलित लेखन के मूल में स्वातंत्र्य, समता बंधुता न्याय के मूल्य है। परंपराओं की जकड़न में जकड़े हुए चक्रव्यूह में फंसे हुए, भयग्रस्त मनुष्य को भ्रांति के विपरीत मतो की व्युहरचना तोड़कर उठ खड़ा होने का, उत्थान का आक्रमण मार्ग दिखाया डॉ बाबासाहेब आंबेडकर ने। उन्होंने ही मनुष्यता को सबसे बड़ा मूल्य माना। दलितों की मानव के रूप में अस्मिता जगाई।[3]

डॉ. लाल का नाटक एक 'सत्य हरिश्चंद्र' में दलित नायक लौका विद्रोही चेतना से युक्त नायक है। नाटक में देवधर उच्च वर्ग का प्रतिनिधि पात्र है। दलित चेतना से युक्त नायक लौका देवधर के षड्यंत्र को पहचान कर उसका षड्यंत्र उस पर ही पलटा देता है।--- यह सारा नाटक तुम्हारा रचा हुआ था और तुम ही इसके सूत्रधार थे। चलो, अब तुम्हें देनी होगी परीक्षा अपने सत्य की।[4]

इसमें लौका का धर्म एवं परंपरा के नाम पर उच्च वर्ग द्वारा दलितों के ऊपर होने वाले शोषण परंपराओं को खंडित करता है। लाल का दूसरा नाटक 'गंगा माटी' ग्रामीण दलितों की समस्या को उजागर करता है। दलितों द्वारा गंगा की पूजा करके गंगा अंधविश्वास एवं को समाप्त करती है तथा मानवता की विजय होती है। यह नाटक ग्रामांचल तथा जीवन में कटे धर्म की विडंबना को उद्घाटित कर भयमुक्त स्वस्थ जीवन जीने की प्रेरणा देता है।[5] डॉ शंकर शेष का 'नाटक बाढ़ का

[illegible] नैसर्गिक आपदा के सामने जात - पात किस प्रकार नष्ट होती है इसका चित्रण कर समन्ववादी दृष्टिकोण दिखाता है। जिस गांव में धर्म के ठेकेदार लोग हरिजनों को मंदिर प्रवेश नहीं करने देते हैं उसी गांव में यमुना की बाढ़ आने से सब लोग जातिवाद को भूलकर एक हो जाते हैं। मन्नू भंडारी की नाट्य कृति 'महाभोज' में दलितों के नाम पर की जा रही राजनीति को उजागर किया गया है। दलितों की बस्ती जलाकर राख करने के बाद प्रजातंत्र में सब लोग उस घटना को अपने स्वार्थ के लिए ही इस्तेमाल करते हैं। दलित युवक बिशु की हत्या सबके लिए तो महाभोज ही बनती है। गोविंद चातक का नाटक 'काला मुंह' में गांव के उच्च वर्ग द्वारा दलित स्त्री एवं पुरुष पर किए जाने वाले अमानवीय व्यवहार का चित्रण किया गया है। ज्ञानदेव अग्निहोत्री का नाटक, माटी जागी रे, में नायक प्रकाश के माध्यम से दलितों में जगी हुई प्रकाश की किरण को दिखाया गया है। नाटककार का कहना है कि अब दलित जागृत हुआ है। तथा वह पारंपरिक अन्याय अत्याचार का मुंहतोड़ जवाब देने के लीए तैयार है। जब सभी की यही धारणा बन जाएगी तभी भारत के लोग वास्तविक रूप से उन्नति के शिखर पर पहुंच जाएंगे। इस प्रकार वर्ण व्यवस्था धीरे-धीरे समाप्त हो जाएगी।[६] दलित विमर्श की दृष्टि से स्वदेश दीपक की नाट्य कृति 'कोर्ट मार्शल' महत्वपूर्ण है। वर्तमान प्रजातंत्र प्रणाली में भी उसी के सहारे एक दलित पर किस प्रकार अमानवीय अत्याचार किए जाते हैं उसका चित्रण कोर्ट मार्शल करता है। ऊंचे ओहदे पर बैठा उच्च वर्ण कैप्टन कपूर दलित रामचंद्र को बार-बार अपमानित करता है। उसे जो सुविधाएं देनी चाहिए वह भी न देकर उसे अपने बच्चे की टट्टी साफ करवाता है। इतना ही नहीं तो अपमानजनक गालियां देता है। इस पर रामचंद्र कपूर और वर्मा पर गोली चलाता है जिस कारण उसका कोर्ट मार्शल कर दिया जाता है। कोर्ट मार्शल की यह समस्या भारतीय प्रजातंत्र में जगह-जगह दृष्टिगत होती है। माधव सोनटक्के के शब्दों में जवान रामचंदर के कोर्ट मार्शल की सनसनीखेज तथा मेलोड्रमेटीक कहानी प्रस्तुत करना नाटक का उद्देश्य नहीं है, बल्कि रामचंद्र जैसे होनहार अनुशासन ड्यूटी का पक्का, ईमानदार --- को इतना संगीन जुर्म करने के लिए विवश करने वाले वे कौन से तत्व है, उन्हें स्पष्ट कर समकालीन व्यवस्था में छिपी उन प्रवृत्तियों का पर्दाफाश करना है।[७] दूधनाथ सिंह का नाटक 'यमगाथा' उर्वशी और पुरुरवा के मिथक के माध्यम से देव संस्कृति अर्थात उच्च वर्ण संस्कृति के आतंक का चित्रण किया गया है।असुर और अनार्य समुदाय सदा ही सुर और आर्य समुदाय द्वारा पिसता आया है। इसमें नायक पुरुरवा पीड़ित शोषित समुदाय में चेतना और उत्साह निर्माण कराता है। प्रभुत्व वर्ग शोषन की अपनी चिरस्थाई मनोवृत्ति को कभी उजागर नहीं कराता। किंतु मरने से पूर्व पुरुरवा की पुनः लौटने की प्रवृत्ती सामान्य द्वारा भविष्य में भी अन्याय के विरुद्ध उठ खड़े होने का प्रतीक है।[८] डॉ शंकर शेष की नाट्य कृति 'पोस्टर' में भूमिहीन किसानों पर जमीदार तथा वन अधिकारी अत्याचार करते हैं। इसमें आर्थिक शोषण के साथ यौन शोषण की प्रवृत्ति को भी उजागर किया गया है। दलित चेतना से प्रेरित मजदूर एक रात केवल एक पोस्टर चिपकाते हैं और वेतन वृद्धि की मांग करते हैं। तो दूसरे ही दिन उनकी वेतन वृद्धि की मांग पूरी की जाती है। यह बदलाव है दलित चेतना के कारण। उच्च वर्णीय लोग असल में एक डरपोक और सुविधा भोगी जीवन जगने के आदि है। वे संघर्ष नहीं कर सकते और दलित नायक संघर्ष के आधार पर उन्हें पराजित करता। है मुद्राराक्षस के नाटक 'मरजीवा' और 'योवर्स फेथफुली' शोषक और शोषित वर्ग का चित्रण करते हैं। मरजीवा में राजनेता अपनी हवस के लिए भूमि को अपने बंगले पर बुलाता है। भूमि क पति बंगले पर जाने का अर्थ अच्छी तरह से समझता है अतः वह पिता एवं पत्नी सहित आत्महत्या करने का प्रयास करता है। जिसमें पत्नी और पिता की मृत्यु होती है पर आदर्श बचता है। अंत में पुलिस उस पर भी पेट्रोल छिड़ककर आग लगा देती है। 'योर्स फेथफुली' में भी यही प्रवृती है। इसमें कार्यालय के कर्मचारी एवं अफसर दोनों में निर्माण संघर्ष को चित्रित किया गया है। अधिकारी अपने अधीनस्थ कर्मचारियों को हड़ताल पर न जाने की धमकी देते है। वही नायिका कंचनरुपा अफसर के वासना का शीकार बनती है। इसी कारण उसका पति भी आत्महत्या करता है। इस संदर्भ में स्वयं नाटककार का कथन है, संहिताओके नीचे एक साधारण व्यक्ति किस कदर दयनीय होकर मारा जाता है, इसके बहूत से दर्दनाक उदाहरण मुझे पिछले १० बरस से सरकार में काम करते करते हुए मिले है।[९]

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि स्वतंत्रता प्राप्ति के ७२ साल बाद भी भारतीय प्रजातंत्र देश के आदिवासी एवं दलितों को उनके अधिकार नहीं दे सका। आधुनिक शिक्षा एव डॉ बाबासाहेब आंबेडकर इनके विचारों से प्रेरणा पाकर उठ खड़ा हुआ दलित आंदोलन उन समस्त श्रृंखलाओं को तोड डालता है जो श्रृंखलाएं उनकी मानवता को खंडित करती है। दरअसल दलित साहित्य मनोरंजन का आनंद उठाने का साहित्य नहीं है यह प्रतिबद्ध, अनुबद्ध कटिबद्ध, परिवर्तनकामी प्रवृत्तियो से भरा साहित्य है। जो अतित से नहीं वर्तमान से सीखता है और भविष्य को बनाने में विश्वास रखता है।[१०]

संदर्भ सूची :

१. युद्धरत आम आदमी - रमणिका गुप्ता अंक ३३ मई २०१६
२. हिंदी पत्रकारिता पर पत्रकार डॉ बाबासाहेब आंबेडकर का प्रभाव - श्योराज सिंह बैचेन पृ.क्र. १८१
३. दलित साहित्य उद्गम और विकास - योगेंद्र मेश्राम भाग २ पृ.क्र. ७
४. एक सत्य हरिश्चंद्र - डॉ लाल पृ. क्र. ७७
५. नटरंग अंक ३१ पृ.क्र.७२ - जयदेव तनेजा का लेख
६. बीसवीं शताब्दी के हिंदी नाटकों का समाजशास्त्रीय अध्ययन - डॉ लाजपत राय गुप्त पृ. क्र. २१०
७. समकालीन नाट्य विवेचन - डॉ माधव सोनटक्के पृ.क्र. १२०
८. साठोत्तरी हिंदी नाटक - नीलम रानी पृ.क्र. २३०
९. मुद्राराक्षस का नाट्क योवर्स फेथफुली की भूमिका से
१०. दलित चेतना सामाजिक एवं साहित्यिक आयाम - रमणिका गुप्ता पृ. क्र. ९२